Chapter- 7

अध्याय सात

मूल्यांकन एवं उपसंहार

मूल्यांकन एवं उपसंहार

पूर्व अध्यायों में विवेच्य विषय के सन्दर्भ में व्यापक चर्चा करते हुए स्पष्ट किया जा चुका है कि गुजरात की साहित्य उर्वरा भूमि पर हिन्दी काव्य की समृद्ध फसल लहलहाई, उसने गुजरात के साहित्य गौरव को एक ऐतिहासिक गरिमा प्रदान की है। मूलरूप से तो यहाँ भक्ति की धारा में सलंग्न कीर्तन, भजन, पद आदि रागात्मक एवं छान्दस कविता का बोलबाला रहा तथापि गुजरात के प्रातिभ हस्ताक्षरों ने गुजराती संस्कृति और सभ्यता की तर्ज पर भी ब्रजभाषा तथा राजस्थानी में रचनाएँ प्रस्तुत की है।

नरसी महेता से वैष्णव भक्तिपरक साहित्य की ओर लोकार्षण देखा जा सकता है, इनके साथ-साथ जैन-साहित्य का एक विपुल भंडार भी गुजरात में सुरक्षित है, ये जैन साहित्य गुजराती और हिन्दी दोनों ही भाषाओं में रचा गया है। जैन साहित्य को सार्वजनिक रूप से सम्प्रदायेतर विद्वानों एवं काव्य-रसिकों ने भी स्वीकार किया है। जैन मुनि हेमचन्द्राचार्य प्रणीत हिन्दी का प्रथम व्याकरण ग्रंथ 'शब्दानुशासन' अपनी निजी महत्ता के साथ लोकप्रिय हुआ है। कालान्तर में जब सौराष्ट्र के कच्छभुज राज्य में महाराजा लखपति सिंह के वरद् आश्रय ने ब्रजभाषा काव्यपाठशाला का प्रारम्भ हुआ तब उस पाठशाला के प्रथम आचार्य भी कनक कुशल तथा कुँवर कुशल थे, जो राज्यादेशानुसार विद्यापीठ के कुलपति कहे जाते थे, ये दोनों ही आचार्य जैन सम्प्रदायानुवर्ती थे तथा महाराजा लखपति सिंह भी इन्हीं जैन आचार्यों से दीक्षित थे।

पूर्वमध्यकाल से ही गुजरात में हिन्दी कविता का वर्चस्व उभरने लगा था। सबसे उल्लेखनीय बात तो यह है कि उस समय तक ब्रजभाषा समग्र भारत वर्ष की मानद साहित्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी। यदि किसी भी व्यक्ति को राष्ट्रीय स्तर पर कवि के रूप में स्थापित होना था तो उसे बाध्य होकर ब्रजभाषा में ही काव्य-सृजन करना पड़ता था तथा इस काव्यकौशल को राष्ट्रीय स्तर पर विवेचित तथा समीक्षित होना पड़ता था, इसलिए ब्रजभाषा के लोकप्रिय और प्रतिष्ठित कवि होने के लिए आवश्यक था कि उस व्यक्ति का ब्रजभाषा पर, काव्यानुशासन पर असाधारण अधिकार हो।

दूसरी कसौटी यह भी थी कि उस रचनाकार को डिंगल-पिंगल तथा लक्षण ग्रंथों के गहन अनुशीलन का अधिकार हो, अपने पूर्ववर्ती तमाम प्रतिष्ठित रचनाकारों के कृतित्व से वह परिचित हो तथा देश के प्रमुख प्रबन्धकाव्यों, महाकाव्यों का उसने अध्ययन-मनन किया हो, काव्य की परम्परित व्यवस्था तथा संस्कृत-ग्रंथों की आचार संहिता से भी वह परिचित हो। हो सकता है कि इस ज्ञान एवं काव्यानुशासन के बोध के लिए ही ब्रजभाषा काव्य

पाठशाला का प्रारम्भ हुआ हो।

गुजरात में यह एक स्वस्थ तथा समृद्ध परम्परा रही है कि यहाँ उदार प्रजा ने इष्ट के रूप में केवल राधा-कृष्ण की ललित लीलाओं का ही अवगाहन नहीं किया, अपने रास-गरबा नृत्य में ब्रज संस्कृति को ही नहीं स्वीकारा बल्कि ब्रजभाषा के लोकप्रिय पदबन्धों को भी उन्होंने अपने गरबा गीतों में तथा गुजराती लोकगीतों में समन्वित कर लिया। 'गोकुल आवो गिरिधारी' टेक वाला गरबा गीत चारण परम्परा में व्यवहृत अनेक ब्रजभाषा छन्दों से समाविष्ट है, गुजरात के चारण गायक आज भी अपने लोक गीतों में ब्रजभाषा के मनहरण तथा घनाक्षरी छन्दों का साधिकार प्रयोग करते हैं।

विगत अध्यायों में यह स्पष्ट किया जा चुका है कि हिन्दीतर क्षेत्रों में गुजरात जितना हिन्दीमय या हिन्दी के प्रति समर्पित रहा है, उतना अन्य कोई अहिन्दी राज्य नहीं रहा।

इस हिन्दी प्रेम के भी अनेक प्रभावक कारण हैं। प्रथम तो जब श्रीकृष्ण ब्रज तज कर द्वारका आ गए तब उनके साथ अनेक ब्रजवासी परिवार तथा ब्रज का सांस्कृतिक परिवेश भी आ गया। कृष्ण भक्ति भी गुजरात में आ गई और ब्रजभाषा भी गुजरातियों ने स्वीकार कर ली, यही कारण है कि पूर्वमध्यकाल में अनेक समर्थ गुजराती रचनाकारों ने ब्रज संस्कृति के अनुरूप काव्य-रचनाएँ की।

गुजरात में अनेक धर्म सम्प्रदायों के आचार्यो एवं प्रचारक विद्वानों ने अपने-अपने विचारों तथा सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का तथा तत्सम्बन्धी साहित्य का प्रचार एवं प्रसार किया। इनमें सर्वाधिक महत्त्व पुष्टिमार्गीय आचार्यो का रहा है।

महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी ने गुजरात का पर्यटन किया। यहाँ वैष्णव सम्प्रदाय का प्रचार एवं प्रसार किया तथा यहाँ की भावुक प्रजा को श्रीकृष्ण की ललित लीलाओं के सरस राग-रंग से सराबोर किया। पुष्टिमार्ग के अनेक आचार्यो ने गुजरात में स्थापित होकर यहाँ गाँव-गाँव में पुष्टिमार्गीय हवेलियाँ स्थापित की तथा श्रीकृष्ण की लीलाओं के प्रति जनसामान्य को आकर्षित किया। तदनन्तर पुष्टिमार्ग में जब मन्दिरों में नित्य कीर्तन की व्यवस्था हो गई, तब अनेक कीर्तनकार कवियों ने भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं का वैविधयपूर्ण वर्णन करना प्रारंभ कर दिया। इस व्यवस्था के अंतर्गत गाँव-गाँव में ब्रजभाषा के कीर्तन पदों का तथा ब्रजभाषा गद्य में रचित वार्ता-साहित्य का वाचन होने लगा तथा जनमानस में ब्रजभाषा का प्रचार एवं प्रसार होने लगा।

कबीरपंथी विचारकों के अनेक मंदिर तथा मठ गुजरात में स्थापित है, अनेक संत एवं साधुओं ने यहाँ ब्रजभाषा में रचना करके पांडुलिपियाँ सुरक्षित रखी, स्वामीनारायण सम्प्रदाय

तो अपने प्रारम्भिक काल से ही गुजरात में रचा-पचा रहा है, स्वामीनारायण के अष्टछापी कवियों का साहित्य प्रदान विशेष उल्लेखनीय रहा है। यहाँ के राजाओं में जाड़ेजा वंशीय प्रशासकों ने काव्य-रचनाएँ की है, राजवंशीय कवियों की एक प्रतिष्ठित परम्परा यहाँ देखी जा सकती है। राधास्वामी सम्प्रदाय, रामानन्दी सम्प्रदाय तथा जैजैश्री गोकुलेश के अनुवर्ती भक्तकवियों के ग्रंथ भी यहाँ विपुल मात्रा में संग्रहित हुए हैं।

ब्रजभाषा के प्रतिष्ठित आचार्य कवियों ने दयाराम, मेहरामण सिंह, गोविन्द गिल्लाभाई, दलपत-वंशीधर आदि महाकवियों का नाम उल्लेखनीय है जिन्होंने काव्यानुशासन का मनन करके लक्षण ग्रंथों का निर्माण किया है तथा स्वयं भी महाकाव्यों तथा प्रवन्धकाव्यों का प्रणयन किया है। यह परम्परा आधुनिक काल तक व्रजभापा काव्यपाठशाला के माध्यम से चलती रही है। ब्रजभाषा काव्यपाठशाला में दीक्षित शताधिक कवियों की काव्य-रचनाएँ इस सन्दर्भ में समीक्षित हो चुकी है। खेद का विषय है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् आजाद देश के नेताओं ने इस पाठशाला की घोर उपेक्षा की और सन् 1948 में ही यह बन्द कर दी गई, इस तरह दो सौ वर्षों का गरिमामय इतिहास समाप्त कर दिया गया।

गुजरात व्यापार-सम्बन्धों तथा अपनी सीमाओं के विस्तार से जुड़े हिन्दी भापी प्रदेशों से संलग्न होने के कारण भी हिन्दी भापा से जुड़ा रहा है और गाँधीजी, काका कालेलकर, के.एम. मुंशी जैसे वरिष्ठ नेताओं एवं हिन्दी प्रचारकों के सद्प्रयासों से भी हिन्दी यहाँ फलती-फूलती रही है तथा हिन्दी साहित्य का सृजन यहाँ अनवरत रूप से होता रहा है।

यहाँ के ब्रजभाषा कवियों में विशेप रूप से दयाराम तथा आचार्य गोविन्द गिल्लाभाई ऐसे अनेक कवि हुए है जो हिन्दीतर तथा हिन्दी भापा दोनों ही क्षेत्रों में समान रूप से लोकप्रिय रहे हैं। अनेक विद्वानों ने इनके काव्य की विवाद समीक्षा की है, दयागम अपनी ब्रजभाषा में रचित सतसई के कारण वहुत प्रसिद्ध रहे है, डॉ0 अम्वाशंकर नागर ने दयाराम सतसई पर समीक्षात्मक ग्रंथ लिखा है तथा आचार्य रघुनाथ भट्ट ने भी इस ग्रंथ को समालोचित किया है। दयाराम के दोहे इतने प्रसिद्ध हुए कि गुजरात के अनेक कवियों ने इनकी तर्ज पर ही दोहा लिखना प्रारम्भ कर दिया। आचार्य रघुनाथ भट्ट ने कहा है कि दयाराम के दोहों को लोग काव्यदृष्टि से अशुद्ध वतलाते है। किन्तु दयागम ने दोहों के भेदोपभेदों के अनुरूप अनेक प्रकार के मात्रिक दोहों का प्रयोग किया है, जो सामान्यत: लोक व्यवहार में प्रचलित नहीं है, ऐसे दोहों में भ्रामर-शरभ-मण्डूक-मर्कट-आदि उल्लेखनीय है, जो अपने मात्रिक परिमाण की व्यवस्था के कारण स्वतन्त्र सत्ता रखते हैं।

समन्वय और सद्भाव के कीर्तिस्तम्भ भी गुजरात की साहित्य-लेखनी ने प्रस्तुत किए है, एक ही ग्रंथ को समन्वित रूप से कई कालखण्डों में तथा कई रचनाकारों के द्वारा लिखा गया है। लगभग आठ रचनाकारों के समन्वित प्रयास से लिखा गया तथा कवि मेहरामण सिंह के द्वारा मुख्य रूप से प्रणीत 'प्रवीण सागर' का सम्पूर्ण निर्माण इसी औदार्यमय समन्वयन का प्रतीक है जिसकी रचना प्रक्रिया में एक नारी लेखिका का भी सहयोग उल्लेखनीय है।

गुजरात के अन्तर्गत कच्छभुज की ब्रजभाषा काव्यपाठशाला अपने विशिष्ट प्रदान तथा महत्ता के कारण देशभर में प्रसिद्ध रही है, गुजरात का साहित्य-इतिहास इसके द्वारा गौरवान्वित हुआ है कि जो कार्य भारतवर्ष के हिन्दी-क्षेत्रों में सम्भव नहीं हो पाया वह महत्कार्य गुजरात की धरती पर तथा गुजराती भाषी साहित्य-रसिकों के द्वारा सम्पन्न हुआ, कच्छभुज के महाराजा लखपति सिंह के सौजन्य से उनके गुरु जैनाचार्य कनक कुशल तथा कुँवर कुशल के निर्देशन में जो ब्रजभाषा काव्यपाठशाला स्थापित हुई वह अपनी पूर्ण प्रतिष्ठा के साथ सतत् अग्रसर होती रही और लगभग 200 वर्ष पर्यन्त यह सारस्वत परम्परा अक्षुण्य रूप से सम्मान अर्जित करती हुई, अपनी अत्यन्त सार्थक भूमिका को प्रोज्ज्वल बनाती रही।

इस पाठशाला में काव्यानुशासन की विधिवत् शिक्षा ही नहीं दी जाती थी वरन् प्रायोगिक रूप ये काव्य-सृजन की क्षमता भी विद्यार्थियों में पैदा की जाती थी। अंतिमवर्ष की परीक्षा में विद्यार्थी द्वारा किसी निर्दिष्ट विषय पर 'बावनी' या 'शतक' काव्य-रचना करके ही परीक्षा उत्तीर्ण की जाती थी, इस परम्परा के लगभग 54 बावनी-काव्य प्रकाशित हो चुके है, .और लगभग 157 बावनी-काव्यों की पांडुलिपियाँ भुज के राजकीय ग्रंथागार में सुरक्षित हैं।

गुजरात की ब्रजभाषा काव्यपाठशाला की एक और महत्त्वपूर्ण भूमिका यह रही कि यहाँ काव्यानुशासन की शिक्षा देने के लिए तथा लक्षण ग्रंथों का विधिवत ज्ञान कराने के लिए ब्रजभाषा के महाकवियों के काव्य-ग्रंथ एकत्र किए गए। उस समय में प्रेस की सुविधा सर्वसुलभ नहीं थी, आचार्य गोविन्द गिल्लाभाई को अपने ग्रंथों के मुद्रण के लिए बम्बई जाकर प्रेस के द्वार खटखटाने पड़ते थे। इसके विकल्प में यहाँ के अध्यापकों, आचार्यों एवं साहित्यकारों ने अपने व्यक्ति-प्रयासों से भारतवर्ष के ग्रंथागारों से महत्त्वपूर्ण काव्यग्रंथों की पांडुलिपियों से हस्तलिखित प्रतियाँ तैयार की या करा ली। और उन्हें विद्यार्थियों के वाचन हेतु उपलब्ध कराया गया। स्वयं आचार्य कवि गोविन्द गिल्लाभाई ने सैंकड़ों ब्रजभाषा-ग्रंथों की स्वयं लिखकर प्रतिलिपियाँ तैयार की थी तथा अपने व्यक्तिगत प्रयासों से अथवा अर्थव्यय करके महत्त्वपूर्ण पांडुलिपियाँ प्राप्त की थी। उनके अपने निजी ग्रंथागारों में ऐसी सैंकड़ों

पांडुलिपियाँ थी, जो सम्प्रति भुज के राजकीय पुस्तकालय में तथा बड़ौदा के प्राच्य विद्या मन्दिर के ग्रंथागार में सुरक्षित हैं। इस संयोजन-प्रयास में गुजरात में ऐसे महत्त्वपूर्ण ब्रजभाषा-ग्रंथों का एक सम्पन्न तथा समृद्ध कोश एकत्र कर दिया। कुछ साहित्यकार तो ऐसे भी हुए जिन्होंने अपने निजी प्रयास से इतना बड़ा संग्रह तैयार किया जितना किसी अर्थसम्पन्न साहित्य-संस्था के लिए भी सम्भव नहीं था। आचार्य कवि गोविन्द गिल्लाभाई ऐसी ही प्रवृति के आचार्य कवि थे।

ब्रजभाषा काव्य पाठशाला में विभिन्न वर्गों एवं कक्षाओं के लिए एक नियत पाठ्यक्रम तैयार किया गया जिसके अंतर्गत राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित कवियों एवं साहित्यकारों की रचनाओं को समावित करके विद्यार्थियों का ज्ञानवर्द्धन किया गया। इस प्रकार ब्रजभाषा काव्यपाठशाला के माध्यम से गुजरात में केवल ब्रजभाषा कविता की एक सम्पन्न भूमिका ही नहीं बनी बल्कि इस पाठशाला ने अनेक ऐसे मेधावी कवियों एवं साहित्यकारों को भी तैयार किया जिन्होंने अपनी कीर्ति पताकाएँ सम्पूर्ण राष्ट्र में फहरा दीं।

उस समय सारा देश छोटे-छोटे रजवाड़ों में विभाजित था, इन रजवाड़ों में अन्यान्य व्यवस्थाओं के अतिरिक्त दरबारी समारोहों, संगीत सम्मेलनों तथा कवि गोष्ठियों की भी परम्परा रही है। प्रशासक वर्ग अपनी राज्यसभा में योग्य, स्थापित तथा विद्वान कलाकारों एवं कवियों को आश्रय देता था, ये कलाकार दरबार की शोभा होते थे तथा अन्यत्र दूर-दूरांत राज्यों तक अपनी प्रसिद्धि के कारण राज्य की प्रसिद्धि भी प्रसारित करते थे। ऐसे ही आश्रित कविगण अपने आश्रयदाता की प्रशस्ति से सम्पन्न निर्दिष्ट विषय पर महाकाव्य या प्रबन्ध काव्य की संयोजना तैयार करते थे। ऐसे अनेक महाकाव्य या लक्षण ग्रंथ गुजरात में सम्पन्न हुए है, जिनमें आश्रयदाता की प्रशस्ति मूल रूप से केन्द्रस्थ रही है और शेषांश ध्यानाकर्षित नहीं करता।

गुजरात में हिन्दी साहित्य की जड़ें जमाने में महाराव लखपति सिंह की अहम् भूमिका उल्लेखनीय रही है। वह स्वयं भी उच्चकोटि के कवि थे। ब्रजभाषा पाठशाला के प्रारंभिक कुलपति कनक कुशल तथा कुँवर कुशल मुख्य रूप से जैनाचार्य थे, इन जैनाचार्यों का संरक्षण ब्रजभाषा पाठशाला को लगभग सौ वर्षों तक प्राप्त होता रहा। इसका सीधा प्रभाव यह भी रहा कि गुजरात में उपलब्ध ब्रजभाषा का जैन साहित्य एक स्थान पर संग्रहीत हो गया। जैन ग्रंथागार के द्वारा जैन दर्शन एवं जैन साहित्य का अध्ययन एक ही स्थान पर उपलब्ध हो सका, चूंकि उस समय सम्पूर्ण राष्ट्र में काव्यभाषा के रूप में ब्रजभाषा ही प्रतिष्ठापित थी, इसीलिए ब्रजभाषा को केन्द्र में रखकर ही इन धर्मग्रंथों का सम्पादन तथा

संयोजन संभव हो सका।

कच्छ के महाराव ने ब्रजभाषा काव्यपाठशाला के संचालन के लिए राजकीय आर्थिक अनुदान की व्यवस्था कर दी थी तथा एक गाँव भी इस पाठशाला को भेंट कर दिया था जिसकी आमदनी से विद्यालय के खर्च चलते रहे। कच्छ के महारावों के साथ-साथ वहाँ के अधिकारी वर्ग भी साहित्यिक अभिरुचि वाले थे। दीवान मणिभाई जसभाई ने पाठशाला के परीक्षार्थियों के लिए 'बावनी' ग्रंथ रचना पर पुरस्कार प्रदान करने की परम्परा प्रारम्भ की थी। गुजरात में रचित लगभग 65 बावनियाँ अब तक प्रकाश में आ चुकी हैं। पुरस्कृत बावनियाँ कच्छ राज्य के प्रबन्धन में मुद्रित होती थीं। पाठशाला के द्वारा विधिवत परीक्षा लेकर उत्तीर्ण विद्यार्थी को 'कवि' की उपाधि से अलंकृत किया जाता था। काव्यशास्त्र के अतिरिक्त पाठशाला में ज्योतिष, संगीत, नृत्य, अश्वशास्त्र, वैद्यक, रत्नपरीक्षा, कामशास्त्र, नीतिशास्त्र, योगशास्त्र, दर्शन-पुराण एवं सामुद्रिक शास्त्रों का भी शिक्षण दिया जाता था।

गुजरात में अनेक समृद्ध लक्षण ग्रंथों की रचनाएँ हुई है जिनमें निम्नांकित ग्रंथ उल्लेखनीय हैं- अलंकार निरूपण, लखपति जससिन्धु, शृंगारसिन्धु, शब्दविभूषण, अलंकारोदधि, वक्रोत्तिविनोद, श्लेषचन्द्रिका, अलंकारनिधि, भावभूषण आदि इनके रचयिता कवियों के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं-

दलपतराय वंशीधर, आचार्य कुँअर कुशल, भगवददास रिझवार, गोविन्द गिल्लाभाई, केशव अयाची, भैरवदान गढ़वी, पिंगलसिंह गढ़वी आदि थे। जिनमें गोविन्द गिल्लाभाई ने वक्रोत्तिविनोद, श्लेषचन्द्रिका, अलंकारोदधि तथा शब्दविभूषण ग्रंथ रचे थे।

महाराव लखपति सिंह के मुख्य पाँच ग्रंथों का उल्लेख मिलता है- लखपति शृंगार अथवा रसतरंग, सदाशिवविवाह, सुरतरंगिणी, मृदंग मोहरा तथा लखपति भक्तिविलास।

महाराव लखपति सिंह की तरह ही राजकोट के जाड़ेजा राजघराने के महाराव मेहरामण सिंह भी एक प्रसिद्ध कवि के रूप में ख्यात रहे हैं। इन्होनें अपने छह मित्रों एवं लींबड़ी की राजकुमारी सुजानबा के संयुक्त प्रयास से 'प्रवीण सागर' नामक महाकाव्य की रचना की थी किन्तु दुर्भाग्य से इस ग्रंथ की 60 लहरें ही पूर्ण हो पाई थी कि अचानक महाराव का देहान्त हो गया। तब बाद की 24 लहरें दलपतराम डाह्याभाई एवं आचार्य गोविन्द गिल्लाभाई ने पूर्ण की थी। यह एक प्रेमाख्यान महाकाव्य है तथा गुजरात में रचे हुए ब्रजभाषा महाकाव्यों में इसका पर्याप्त सम्मान है।

उमराव, महाराव, राजाओं-महाराजाओं के अतिरिक्त गुजरात में अनेक राज्याश्रित कवि भी हुए हैं जिन्होंने ब्रजभाषा में काव्य-रचना करके ख्याति अर्पित की थी। इनमें जनकवि,

मीरमुराद आदि कवियों का उल्लेखनीय स्थान है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में ऐसे अनेक कवियों तथा काव्यधाराओं का परिचय दिया गया है जो अब तक उपलब्ध नहीं था। इस ग्रंथ में दयाराम के कृतित्व को तथा दयाराम सतसई को अनेक आयामों से विवेचित किया गया है। आर्या सप्तशती, गाथा सप्तशती, अमरूक शतक, शृंगार शतक, ब्रजविलास सतसई, आनन्दप्रकाश सतसई, सतसैयारामायण, भाषा सतसई, प्रेम सतसई, बसंत सतसई, सुकवि सतसई, जानकी सतसई, बुधजन सतसैया, ज्ञानसतसई, ब्रजसतसई, शिव सतसई, सत्संग सतसई, विभूति सतसई आदि सतसई परम्परा में दयाराम सतसई का उल्लेखनीय स्थान हैं।

गुजरात की हिन्दी काव्य-परम्परा ओर उसके अधुनातम प्रयोगों के सन्दर्भ में इस ग्रंथ में सभी संभाव्य शीर्षकों पर विचार किया गया है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में स्पष्ट किया गया है कि गुजरात का हिन्दी काव्य निम्नांकित वर्गों में विभाजित किया जाता सकता है- सम्प्रदाय सापेक्ष भक्तिधारा के अन्तर्गत प्रथम कृष्णभक्तिधारा को विवेचित किया गया है। जिसके अन्तर्गत पुष्टिमार्गीय भक्तिधारा, जयजय श्री गोकुलेश एवं जयगोपाल शाखा की भक्तिधारा, स्नेही पंथ की अविधारा, विविध पंथों के कृष्ण भक्त कवि एवं स्वतन्त्र कृष्ण भक्त कवि।

स्वामीनारायण सम्प्रदाय के विशिष्ट अष्टछापी कवियों का परिचयात्मक विवरण देकर अन्यान्य कवियों की चर्चा की गई है। राम भक्त कवियों को विश्लेषित किया गया है। शैव एवं शक्ति सम्प्रदाय के कुछ कवियों का उल्लेख किया गया है। जैन कवियों की परम्परा तथा उनके समृद्ध साहित्य को व्याख्यायित करने का यत्न किया गया है।

गुजरात की निर्गुण भक्तिधारा का साहित्य भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। इसमें रामानन्दी सम्प्रदाय के कवि, कबीरपंथी साहित्य तथा ज्ञानाश्रयी अखा जैसे कवियों की अहम् भूमिका को विश्लेषित किया गया है। रामकबीर पंथ का अलग ही एक सम्प्रदाय यहाँ रहा है, जिसका समृद्ध ब्रज साहित्य यहाँ उपलब्ध है। डॉ0 रामकुमार गुप्त ने अपने शोध प्रबन्ध में इसकी विस्तृत चर्चा की है।

यहाँ राजाओं द्वारा रचित काव्य, राज्याश्रित कवियों का साहित्य तथा चारणभाटों का प्रशस्तिपरक साहित्य भी उल्लेखनीय है। यहाँ लोकभिमुख गरबा साहित्य में भी ब्रजकाव्य के दर्शन होते हैं। गुजरात का अधिकांश हिन्दी साहित्य रूढ़ एवं परम्परावादी रहा है। मध्यकालीन साहित्य ब्रजभाषा में उपलब्ध है तथा हिन्दी भाषी प्रांतों की अनुप्रेरणा पर अवलम्बित रहा है। सन 1426 में हुए भालण के 'दशमस्कंध' में ब्रजभाषा के पद सम्मिलित

किए हैं, जिनमें मुख्य है-

- *मैया मोहे भावै दधिभात ।*
- *ब्रज कौ सुख सुमरत हौ स्याम ।*
- *कहौ मैया, कैसैं सुख पाऊँ ?*
- *अब पढ़िबे कौ आयौ दिन ।*
- *सुत, मैं सुनी लोक में बात,*
- *कौन तप कीनौ री माई नन्दघरणी ।*

कहना न होगा कि इन पदों पर वैष्णव कवियों का सीधा प्रभाव देखा जा सकता है। अष्टछाप के कवियों के अनुरूप ही इन्होंने कृष्णकाव्य को काव्यांकित किया है। गुजरात के मध्यकालीन काव्य में श्रृंगार और भक्ति का प्राधान्य रहा है। यह अनुप्रेरणा उत्तर भारतीय काव्यधारा से ग्रहण की गइ थी, यहाँ के अधिकांश कवियों पर ब्रजभूमि के वरिष्ठ कवियों का प्रभाव रहा है। इसका प्रमुख कारण यही है कि काव्य ज्ञान के लिए अथवा शास्त्र ज्ञान के लिए इन रचनाकारों को उत्तर भारतीय ब्रजभाषा कवियों का मुखापेक्षी रहना पड़ता था, उनके अन्तस में इन्हीं ब्रजकाव्यधाराओं के आदर्श स्थापित हो जाते थे और फिर अपने रचनाकाल में इनकी अन्तर्प्रेरणाएँ भी इन्हीं कविताओं से अनुप्रेरित रहती थी, यही कारण है कि ब्रजभाषा-भाषी कवियों की काव्यधारा में तथा गुजरात के कवियों की काव्यधारा में एकरसता तथा संगतसाम्यता परिलक्षित होती है। मध्यकालीन ब्रजभाषा काव्यधारा में अलंकारों के सामास एवं चमत्कृत उदाहरण सर्वत्र देखे जा सकते है, जैसे अनुप्रास का एक कवित्त पदमाकर का दृष्टव्य है-

''कलिन में कूलन में, कुंजन में, कछाटन में,
क्यारिन में कलिन कलीन किलकंत है।
कहैं 'पदमाकर' पराग हूँ में, पौन हू में,
पानन में पिकन पलासत पंगत है।
द्वार में, दिसान में, दुनी में, देस देसन में,
देखौ दीप दीपन में दीपत दिगंत है।
बीथिन में ब्रज में, नबेलिन में, बेलिन में,
बागन में बनन में, बगरयौ बसंत हैं ॥''

गुजरात के स्वामीनारायण सम्प्रदाय के वरिष्ठ अष्टछापी कवि ब्रह्मानन्द की एक रचना देखिए-

''झटपट पट उलट पलट नटवट झट,
लट पट कट घट निपट लले;
कोकट अति उकट, त्रुकट गति धिनकट,
मन डर मत लट लपट भले।
जमुना तट प्रगट अमर अट रट जकट
सुर थट खेखट तैंण समे।
धण रव पर फरर, धरर पद घूघट,
रंग भर सुन्दर श्याम रमे ॥''

उत्तर भारतीय ब्रजभाषा कवियों ने शृंगार वर्णन में विषय को संवेदना के अतिरेक के साथ-साथ उसे मांसल बना दिया है। जिसके कारण स्थूल वर्णन का दृष्टिदोष भी उत्पन्न हो उठा है, यथा-

''बंद बाँधि बाँधिहारी, आरी हों करी हों किमि,
तोरि तोरि डारत हो उमगि समाजे पै ।
'तोषनिधि' मेरे हौ, न मेरी कही मानत हौ,
लौटि तौ जैहैं प्रानप्यारे सुखसाजे पै।
फरकि फरकि फारि बसननि जैहौ कहाँ,
रहि हौ कि नांही कछु करिकै इलाजे पै।
हा हा कुच लाजैं रहौ, कंचुकी बिराजैं रहौ,
निकसि मिलौगे कहा दौरि दरबाजे पै ॥''

इसी शृंगार वर्णन के समानान्तर गुजरात के कवि दयाराम लिखते हैं-

''कटि की कसर सो तौ आई है उरोज, मानौ
उदर की पीनता नितंब जाइ बसी है।
चरन की चंचलता नैन में निकेत कीनौ
बैनन की मृदुता सो लाज ही में लसी है।
हास्य की मोहकता सो जाइ मिली मान मांहि
बालकेलि आतुरता लाल केलि कसी है।
जोवन के आये राधे कैसी अस्तव्यस्त भई,
तौ हू दया प्रभु नैन ही तें हिये धँसी हैं ॥''

गुजरात में निर्गुण काव्यधारा के संत राम कबीर हुए है, जिन्होंने निर्गुण भक्ति

में भी सगुण स्वरूपा उपासन भक्ति को महत्त्व दिया है, उनका एक दोहा है-

''कबिरा कबिरा का कहै, बजा जमुना के तीर ।
हक इक गोपी प्रेम में, कहि गए लाख कबीर ॥''

इसी प्रकार-

''निराकार निर्गुण अगम, शून्याकाश अजान,
ओम उचारन में बसा, बंसी वाला कान्ह ॥''

शेख बहाउद्दीन बाजन की रचनाओं पर कबीर का बहुत प्रभाव देखा जा सकता है, जैसे-

''भौरा लैवे फूल रस, रसिया लेवे बास,
माली सींचे आशकर, भौंरा खड़ा उदास ॥''

कबीर दास कहते हैं-

''माली आवत देखि कैं, कलियाँ करत पुकार ।
फूली फूली चुनि लईं, काल्हि हमारी बार ॥''

रीतिकालीन कविता का चमत्कार प्रवीण सागर ने तथा गोविन्द-हजारा जैसी संकलित काव्य-कृतियों में देखा जा सकता है, मेहरामण सिंह कृत प्रवीण सागर का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

''सूर बिना चक, बाग बिना पिक, बारि बिना इक है झख जैसैं ।
हंस बिना सर, पंख बिना पर, पत्र बिना तरु राजत तैसैं ।
मोर बिना घन, भोर बिना वन, बूँद बिना तन चातक वैसैं ।
प्रेम बिना मित, वाम बिना पति, सागर जीवत है गृह जैसैं ॥''

मध्यकालीन आचार्य कवियों की छाप गुजरात के हिन्दी कवियों पर भी पड़ी थी, नायिकाभेद, काव्यांग निरूपण, षट्ऋतु, शृंगार, विरह, अलंकार, रस, गुण-दोष, छन्द आदि पर लक्षण-उदाहरण के साथ रचनाएँ हुई हैं। मेहरामण सिंह तथा गोविन्द गिल्लाभाई का कृतित्व इस विषय में तुलनीय है। डॉ0 भगवतशरण अग्रवाल ने अपने ग्रंथ ***'मध्यकालीन गुजरात का हिन्दी-काव्य'*** में दयाराम द्वारा रचित दयाराम सतसई में अनेक छन्दों के नामों का लक्षण-उदाहरण के साथ उल्लेख किया है जिनमें प्रमुख हैं- भ्रामर, शरभ, मण्डूक, मर्कट, करभ, नट, मराल, मदकल, पयोधर, चल, वानर, त्रिकल, कच्छप, मत्स्य, शार्दूल, अहिवर, शुनक आदि ।

इसी तरह भक्तिपूर्ण काव्य में परम्परित भक्ति एवं संत कवियों की काव्यधारा का ही अनुपोषण किया गया है। प्रणामी सम्प्रदाय के प्रवर्तक प्राणनाथ ने रास को केन्द्रस्थ विषय बना कर काव्य-सृजन किया था, काम और भक्ति के विवेचन में कवि का आध्यात्म्यवादी दार्शनिक मन्तव्य सामने आया है। यह वैचारिक तथ्य उत्तर भारतीय भक्ति काव्य से अनुग्रहित है। प्रणामी सम्प्रदाय को निजानन्दी, खिजड़ापंथी, धामीपंथ, मेहराजपंथ तथा चाकलापंथ जैसे नामों से भी जाना जाता है। इस पंथ में भक्तिमय शृंगार काव्य का प्रचुर मात्रा में सृजन हुआ था। प्राणनाथ कृत रास महाकाव्य है जिसमें 47 प्रकरण तथा 607 छन्द हैं। अनेक राग-रागिनियों में यह काव्य निबद्ध है, इसे अष्टछापी कीर्तन साहित्य की श्रेणी में भी रखा जा सकता है किन्तु यह मुक्तक काव्य न होकर प्रबन्धात्मक रचना है। इसमें रासकथा का पूर्वापर औचित्यपूर्ण वर्णन है। इस प्रकार के शृंगारपरक भक्तिकाव्य का सृजन गुजरात में प्रचुर मात्रा में हुआ है।

गुजरात की समग्र मध्यकालीन काव्यधारा का अवलोकन किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि यहाँ पर उत्तर भारतीय काव्यधारा की अनुवर्तिनी धारा ही प्रवाहित रही है, जहाँ भक्ति एवं शृंगार का सुन्दर समन्वयन देखा जा सकता है तथा काव्य का मुख्य रूप सौन्दर्यवादी अभिगम से सम्पृक्त रहा है। ब्रज क्षेत्र की काव्यधारा का इतना अधिक प्रभाव यहाँ के रचनाकारों पर हुआ कि वैष्णवेतर अन्यान्य सम्प्रदाय के साहित्य में भी कृष्ण भक्तिपरक ब्रजभाषा की रचनाएँ सृजित हुई और इसे सम्प्रदाय की धारा में सहज रूप से स्वीकारा भी गया।

परम्परा का अनुपालन मध्यकालीन साहित्य पर ही देखा जा सकता है। आधुनिक साहित्य प्रयोगवादी संरचनाओं से सम्पृक्त रहा है। इस काल में साहित्य की विविध विधाओं का अनुवर्तन भी हुआ है, और मौलिक प्रयोग भी सामने आए हैं। मध्यकाल में छन्दों और अलंकारों से बोझिल, वास्तविक सौन्दर्य से दूर हुई कविता आधुनिक काल में अनावश्यक छन्दों एवं अलंकारों का त्याग कर एक नये स्वरूप में आई। आधुनिक हिन्दी कविता एक ओर परम्पराओं से जुड़ी है तो दूसरी ओर उस पर पाश्चात्य प्रभाव भी है। गुजरात की आधुनिक हिन्दी कविता बौद्धिक, शोषण विरोधी और आक्रोशपूर्ण होते हुए भी निराशा और हताशा की कविता नहीं है। वह आस्था और विश्वास की कविता है। आधुनिक कवियों ने जीवन और जगत को बौद्धिकता के नजरिए से देखा है। एक उदाहरण प्रस्तुत है-

''आज सूरज की / डूबती किरणों से
एक नया पाठ सीखा हूँ-

लोग उगते सूरज को सिर झुकाते हैं ।''

- 'फूल', डॉ0 रमाकान्त शर्मा

यहाँ के कवियों ने राष्ट्र-प्रेम, जीवन की गहन दार्शनिकता, जीवन की व्यापकता, अनुभूति की गहनता, आध्यात्मिकता, देश में व्याप्त भ्रष्ट राजनीति, भारतीय आदर्शों और अस्मिता के साथ-साथ प्रणय की कोमल अनुभूतियों को अपनी कविताओं में कुशल शिल्प-वैभव के साथ प्रस्तुत किया है।

गुजरात के लगभग प्रत्येक कवि ने हास्य-व्यंग्य की कविताएँ लिखी हैं क्योंकि हास्य-व्यंग्य के बिना जीवन अधूरा है और दुनिया का कोई भी साहित्यकार इस से बच नहीं पाया है। हास्य-व्यंग्य कविता के क्षेत्र में डॉ0 अम्बाशंकर नागर, किशोर काबरा, रामकुमार गुप्त, माणिक मृगेश, नथमल केड़िया, पारुकांत देसाई, ओंकार अग्निहोत्री 'शिवम', डॉ0 क्रांति कनाटे, रोहित श्याम चतुर्वेदी 'शलभ', अब्बास अली ताई 'अजनबी', मस्तराम गहलोत, भगवानदास जैन, सुरेश शर्मा 'कांत', डॉ0 गोवर्द्धन शर्मा, डॉ0 चन्द्रकांत मेहता, मंजुमहिमा भटनागर, दीनबंधु द्विवेदी, विजय तिवारी, शेखर जैन, रमेश चन्द्र शर्मा 'चन्द्र', आत्म प्रकाश, नलिनी पुरोहित, डॉ0 भगवान दास कहार आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। शेखर जैन के व्यंग्य का एक उदाहरण प्रस्तुत है-

''कहते हैं- / भौंकता कुत्ता काटता नहीं हैं,,/मगर बड़ा अज़ीब लगता है-/यह इंसान भौंकता भी है/और काटता भी है।''

गुजरात के आधुनिक कवियों ने प्रकृति को काव्याभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम बनाया है। एक ओर इनका काव्य प्रकृति को, काव्याभिव्यक्ति के प्रमुख उपादान के रूप में स्वीकार करके भी जीवित और उसके यथार्थ-बोध से सम्पृक्त रहा है तथा दूसरी ओर प्रकृति की सापेक्षता के कारण रससिक्त बना रहा है। प्रकृति के प्रति यहाँ के कवियों की गहन रागात्मकता परिलिक्षित होती है। अम्बाशंकर नागर, किशोर काबरा, रामकुमार गुप्त, अविनाश श्रीवास्तव, शशि जरोड़ा, भँवरलाल गूर्जर, कमल पुंजाणी, विष्णु विराट, दयाचन्द जैन, द्वारका प्रसाद साँचीहर, नलिनी पुरोहित, शांति सेठ, रमाकांत शर्मा, सुधा श्रीवास्तव, अंजना संधीर आदि अनेक कवियों ने प्रकृति के विविध रूपों का चित्रण किया है।

आधुनिक हिन्दी कवियों की तरह गुजरात के आधुनिक कवियों ने अपनी कविता में नारी के विविध रूपों के चित्र उकेरे हैं। इन कवियों ने नारी-सौन्दर्य का शालीन चित्रण किया है। साथ ही नारी की विभिन्न अवस्थाओं में बाह्य स्वरूप, उनके विभिन्न क्रिया-व्यापार, वेशभूषा, परिवेशगत मानसिकता तथा उनके जीवन की एक-एक थिरकन-स्पन्दन से प्रेरणा

ग्रहण कर उन्हें वाणी दी है। ग्रामीण पृष्ठभूमि से लेकर आधुनिक युग की नारी का रूप-सौन्दर्य और क्रिया-व्यापार सभी कवियों की प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। नारी के रूप-यौवन का ही नहीं, अपितु उनकी सारी दिन-चर्या, उनकी मानसिकता, उनके पारिवारिक-सामाजिक परिवेश तथा उनके सम्पूर्ण जीवन का लेखा-जोखा इन कवियों की कविताओं में मिल जाता है।

अंजना संधीर, इंदिरा दीवान, उत्तरा चीनुभाई, क्रांति येवतीकर, दिव्या रावल, नलिनी पुरोहित, निर्मला आसनानी, प्रणव भारती, प्रतिभा पुरोहित, प्रमीला शुक्ल, पुष्पलता शर्मा, भारती पांडे, भारती मेहता, मधुमालती चौकसी, मरियम गजाला, मीरां रामनिवास, शांति सेठ, शीला घोडे, सुधा श्रीवास्तव आदि कवयित्रियों के साथ-साथ विष्णु विराट, रामकुमार गुप्त, अम्बाशंकर नागर, किशोर काबरा, अविनाश श्रीवास्तव आदि अनेक कवियों ने नारी को अपनी कविताओं में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

आधुनिक काल की कविताएँ आधुनिक बोध की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करती हैं। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था, शोषक और शोषित वर्ग का परस्पर असामंजस्य, औद्योगिक क्रांति के दुष्प्रभाव के कारण मशीन के कल-पुर्जे की तरह जीवन जीने वाला आज का पीड़ित मानव-सभी कवियों के हृदय को उद्वेलित कर रहे हैं। निरन्तर बढ़ती यांत्रिक निर्भरता मानव के जीवन-दर्शन को प्रभावित कर उसके विनाश का कारण बन रही है। मनुष्य यंत्रों का दास बनकर अपने अस्तित्व की महत्ता को कम कर रहा है। विज्ञान की प्रगति के समक्ष आज का मनुष्य नगण्य हो गया है जिसके अनेक प्रश्न-चिह्न खड़े हो गए हैं उनका संकेत आधुनिक कवियों के संकलनों में भलीभाँति देखा जा सकता है।

आज मनुष्य असंगति, विद्रूपता, व्यवधान और व्यंग्य प्रधान परिस्थितियों में रहने को विवश है। अत: आधुनिक कविता वर्तमान समाज की कलई खोल देती है। आधुनिक काल की कविताओं में संत्रास का स्वर प्रमुख है। संत्रास, भय, वेदना, पीड़ा और विभीषिका के मध्य मनुष्य जिजीविषा से लड़ रहा है। कविताओं में चित्रित संत्रास कल्पित न होकर भोगा और सहा हुआ है। आज के भागदौड़ और आपाधापी के युग में असफल होने पर कुंठा और संघर्षरत रहने के कारण उपजे संत्रास, यांत्रिक अभिशाप से उत्पन्न भय और पीड़ा आदि युगबोध और युग-संत्रास की विभिन्न स्थितियों को आधुनिक काव्य-रचनाओं में देखा जा सकता है।

गुजरात के आधुनिक कवि जीवन के द्वन्द्व और संघर्षों को झेलने-सहने में समर्थ होने के साथ-साथ विपदाओं से जूझने का संदेश, संत्रास और पीड़ा को भोगने का दुख,

कष्ट और बाधाओं पर विजय पाने का साहस रखने का भी संदेश देते हैं। साथ ही जीवन-मूल्यों और संस्कृति-बोध का सुन्दर निदर्शन भी आज की कविताओं में देखा जा सकता है।

इस काल के कवियों ने ईश्वरीय सत्ता को भुलाया नहीं है और रहस्य, साधना और आध्यात्म-विषयक कविताएँ लिखी हैं जो आत्म-परिचय और अस्तित्व-बोध से उनकी अस्मिता को किसी अनिवर्चनीय सत्ता से जोड़ती है।

इस शोध-प्रबन्ध में आधुनिक काल के प्रबन्ध काव्यों के काव्य-सौष्ठव, एवं शिल्पगत चेतना, नए प्रतीकों एवं बिम्बों के माध्यम से आधुनिक व्यक्ति के आंतरिक सन्दर्भ को मानवीय सन्दर्भ से जोड़ने के कवियों के प्रयास को प्रदर्शित किया है। इस काल के कवियों के प्रबन्ध काव्यों के पात्र आधुनिक प्रज्ञा, विसंगति, दायित्वबोध के प्रतीक हैं, जो कृति को रचनाकार के युग-सन्दर्भों की प्रासंगिकता से तादात्म्य स्थापित करते हैं।

डॉ0 अम्बाशंकर नागर कृत 'प्रम्लोचा', डॉ0 किशोर काबरा कृत 'उत्तर रामायण', 'परिताप के पाँच क्षण', 'नरो वा कुंजरो वा', 'धनुषभंग', जयसिंह 'व्यथित' कृत 'आर्तनाद', 'राघवेन्द्र', 'बालकृष्ण', 'कैकयी के राम', 'दलितों का मसीहा', राजेन्द्र 'काजल' कृत 'चौला देवी', विष्णु विराट कृत 'कर्ण', भागवत प्रसाद मिश्र कृत 'कारा', 'कस्मै दैवाय', गोपीचन्द चौबे कृत 'हेमांगिनी', 'पृथा', चन्द्रपालसिंह यादव कृत 'विमाता', भारती पाण्डे कृत 'चिन्तन संवाद' आदि प्रबन्ध काव्यों में ऐतिहासिक और पौराणिक पात्रों को आधार बनाकर जीवन दर्शन और युगबोध को इंगित किया है।

मुक्तक परम्परा की रचनाओं में जीवन, समाज व राष्ट्र के विविध चिन्तनात्मक पहलुओं को स्टीक और सम्यक् ढंग से वर्तमान समय के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया है। गुजरात के आधुनिक काल के कवियों ने हिन्दी में भी पर्याप्त ग़ज़लें लिखी है तथा निरन्तर लिखी जा रही हैं। शेख आदम आबुवाला कृत 'घिरते बादल : खुलते बादल', सुलतान अहमद कृत 'खामोशियों में बंद ज्वालामुखी', 'नदी की चीख', भगवानदास जैन कृत 'जिन्दा है आईना', 'कटघरे में हूँ', भागवत प्रसाद मिश्र कृत 'जज़्बात', 'तलाश', 'आखिरी दौर', दयाचन्द जैन कृत 'दर्द का रिश्ता', ऋषिपाल धीमान कृत 'शबनमी अहसास', 'हवा के काँधे पै', अंजना संधीर कृत 'बारिशों का मौसम', 'धूप, छाँव और आंगन', जोजफ़ अनवर कृत 'पगडंडियाँ', रहमत अमरोहवी कृत 'रतजगे', 'इज़ाफा', किशोर काबरा कृत 'चन्दन हो गया हूँ' आदि अनेक ग़ज़लकारों के चर्चित ग़ज़ल संग्रह मिलते हैं। द्वारका प्रसाद साँचीहर, रामचेत वर्मा, चन्द्रमोहन तिवारी, नयन देसाई, विजय कुमार तिवारी, नवनीत ठक्कर, प्रमोद

शंकर मिश्र आदि अन्य उल्लेखनीय ग़ज़लकार हैं जिन्होंने गुजरात के गुजरात के ग़ज़ल-साहित्य को समृद्ध किया है।

गुजरात की हिन्दी काव्य परम्परा में गुजरात के हिन्दी हाइकुकारों का योगदान दिनोंदिन बढ़ रहा है। हाइकु मूलतः जापानी काव्य-विद्या है। गुजरात में हाइकु को गरिमामय रूप में प्रतिष्ठापित करने में डॉ0 भगवतशरण अग्रवाल का महत्त्वपूर्ण स्थान है। हाइकु के सिद्धहस्त हस्ताक्षर डॉ0 भगवतशरण अग्रवाल के 'शाश्वत क्षितिज', 'टुकड़े-टुकड़े आकाश', 'अकह', 'सबरस', 'इन्द्रधनुष', 'अस्ति-नास्ति' चर्चित हाइकु संग्रह हैं। गुजरात में इनके अतिरिक्त रमेशचन्द्र शर्मा 'चन्द्र', रघुनाथ भट्ट, मुकेश रावल, गिरधारी लाल सराफ, भागवत प्रसाद मिश्र 'नियाज', कमल पुंजाणी, डॉ0 विष्णु विराट, डॉ0 चन्द्रकांत मेहता, श्रीमती मधुप्रसाद, डॉ0 रजनीकांत जोशी, डॉ0 किशोर काबरा आदि भी हाइकु रचना कर रहे हैं।

गुजरात के प्रसिद्ध हिन्दी गीतकारों में हिन्दी-जगत के प्रतिष्ठित आचार्य, विद्वान, समीक्षक, संगीत मर्मज्ञ एवं रससिद्ध कवि डॉ0 अम्बाशंकर नागर उल्लेखनीय है, जिनके काव्य संग्रह 'चाँद, चाँदनी और कैक्टस' तथा प्रबन्ध काव्य 'प्रम्लोचा' में कई गीत संकलित हैं।

डॉ0 भगवतशरण अग्रवाल के 'बस, तुम ही तुम' और 'प्यासी धरती : खाली बादल', अविनाश श्रीवास्तव के 'पिछली बहार के सूरजमुखी', 'ठहरी हुई धूप', 'छूटे हुए तटबंधों पर पुनः', रामकुमार गुप्त का 'बिन्दिया के बोल', रामचेत वर्मा के 'मखमली पंख, कटीली राहें', 'छन्द-छन्द रागिनी', भागवत प्रसाद मिश्र का 'गीत रश्मि', जयसिंह 'व्यथित' का 'गीत निर्झर', किशोर काबरा का 'ऋतुमती है प्यास' आदि चर्चित गीत-संग्रह हैं जिनमें गीत-विधा के अनेकविध प्रयोग मिलते हैं।

इनके अतिरिक्त भगवानदास जैन, डॉ0 दयाचन्द जैन, रमेशचन्द्र शर्मा 'चन्द्र', द्वारका प्रसाद साँचीहर, राजेन्द्र 'काजल', सुरेश शर्मा 'कान्त', प्रमोद शंकर मिश्र, कैलाशनाथ तिवारी, प्रणव भारती, चन्द्रपाल यादव, चन्द्रमोहन तिवारी, विष्णु विराट चतुर्वेदी, जितेन्द्र कुमार चौहान 'पुष्प' आदि अन्य गीत हस्ताक्षर है जो गीत-साधना में लीन है। गीतों के साथ-साथ नवगीत भी लिखे जा रहे हैं। अविनाश श्रीवास्तव, अम्बाशंकर नागर, किशोर काबरा, विष्णु विराट चतुर्वेदी नवगीत के हस्ताक्षर हैं। विष्णु विराट चतुर्वदी जी के 'धूम्रवन से लौट आई लाल परियाँ' तथा 'हाथ से छूटे कबूतर' दो नवगीत संग्रह प्रकाशित हुए हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि गुजरात की हिन्दी साहित्य परम्परा बहुआयामी रही है, यहाँ परम्परा और प्रयोग के रूप में जो साहित्य सृजित हुआ है, वह अपने आप में अत्यन्त समृद्ध और पूर्ण समर्थ है। गुजरात में जैन, वल्लभ, कबीर, स्वामीनारायण,

राधावल्लभी जैसे धर्म सम्प्रदायपरक साहित्य का सृजन हुआ तो दरबारी और स्वच्छन्द कविता का भी एक समृद्ध दौर देखा गया है, आचार्य कवियों के लक्षण ग्रंथों का वैभव भी यहाँ व्याप्त हुआ है तो स्वच्छन्द शृंगार की सरस काव्यावलियाँ भी यहाँ आकर्षित करती रही है, यहाँ के राजाओं, दीवानों तथा चारणभाटों ने जो साहित्य संरचनाएँ की है वे भी अपने आप में अप्रतिम हैं।

आधुनिक काल में ग़ज़ल, नवगीत, नई कविता, आधुनिक कविता, हाइकु, अनुदित साहित्य, संस्मरण, उपन्यास, कहानी, समीक्षा, शोध आदि क्षेत्रों में भी विपुल मात्रा में लिखा गया है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के माध्यम से परम्परा और प्रयोग की दृष्टि से इतने बड़े फलक पर गुजरात के हिन्दी साहित्य को प्रथम बार ही विवेचित किया जा रहा है। अनेक अल्प ज्ञात तथा अज्ञात तथ्य इस प्रबन्ध में समाहीत है, जो ग्रंथ की मौलिकता को ज्ञापित करते है।